Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

गणपति मूर्ति एवं पूजा (चीनी तुर्किस्तान एवं खोतान में)

डॉ. प्रो. विभा श्रीवास्तव[1]

सर्वलोवन्दित भगवान गणेश की अर्चना का आलोक केवल भारतवर्ष को ही नहीं प्रत्युत विश्व के अन्य अंचलों को भी सदिया से उद्भाषित करता आया है। वाच पति विनायक की आराधना का जो प्रदीप अनेक शताब्दियों के पूर्व भारतेतर राष्ट्रों में जलाया गया था, वह आज भी निर्धूम और निष्कम्प जल रहा है। इससे लोक भावना भगवान गणेश के प्रति लोक मानस में व्याप्त श्रद्धा और प्रेम का पता चलता है।

विदेशों में श्रीगणेश पूजा के संबंध में आक्सफोर्ड के क्लारडेन प्रेस से प्रकाशित गणेश एक मोनोग्राफ आफ द एलीफेंट फेस्ड गाड 1 नाम पुस्तक में विशद् वर्णन किया गया है। इस पुस्तक में प्रकाशित तथ्यों के अनुसार भारत के अतिरिक्त चीन, चीना तुर्किस्तान, तिब्बत, जापान बर्मा, स्याम, हिन्द चीन, जावा, बाली तथा बोर्नियो में भी श्रीगणेश की प्रतिमाएँ मिलती है। इन मूर्तियों में उन देशों में श्रीगणेश के नाम और पूजन के प्रसार का पता चलता है। बोर्नियों की श्रीगणेश की आसन कास्य मूर्तियॉ एक साथ जुड़ी हुयी खड़ी मुद्रा में पायी जाती है। चीनी भाषा में भगवान श्रीगणेश का नाम है कुआन शी तिएन। चीनी तुर्किस्तान में द्वारपाल के रूप में गणेश की मूर्तियॉ उपलब्ध नहीं होती है। द्वारपाल के रूप में गणेश के स्थान पर हारीती का निर्माण किया गया है। फिर भी किसी न किसी रूप में खोतान में गणेश विशेष लोकप्रिय रहे।[1] एन्देरे के स्तूप के समीप रेत में कुछ कांस्य एवं काष्ठ पट्ट प्राप्त हुये हैं जिनमें तुर्किस्तानी विशेषताओं के साथ गणेश का चित्रण किया गया है।[2] इनमें गणेश चतुर्भुज है व्याध्रचर्म धोती चुस्त पाजामों के ऊपर पहने है जिसका रंग गहरा भूरा है। सर आलेम स्टीम[3] के अनुसार 8वीं शती में निर्मित गणेश मखनद पर आसीन है, किन्तु मखनद ही दो अन्य पद युगल की भांति प्रतीत होता है। देवता का मुख पीत वर्ण का है शरीर कटि तक नग्न है। जो गुलाबी रक्त वर्ण की रेखाओं से विभूषित है। यह प्रतिमा भारतीय परम्परा के अधिक निकट है जिसमें मखनद द्वितीय पदयुगल जैसा आभाषित होता है। ऊपर तथा नीचे के पैरों का झुकाव एक तरह है। नीचे के पद ढीले पाजामों से ढके है। गेटी का अनुमान है कि द्वितीय पद युगल की धोती में झुकाव है।[4] गणेश के चतुष्पद होने का क्या कारण हो सकता है। विनायक गणेश के षड्यंत्र होने का संकेत फाह्यान के तांत्रित संस्कारों के अनुवाद में

[1] प्राध्यापक इतिहास विभाग, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रीवा

प्राप्त होता है।[5] किन्तु इससे इस संबंध में यह निश्चित ज्ञान नहीं प्राप्त होता कि गणेश के इस रूप में किस–किस देवता का सामंजस्य हुआ है। गेटी इस पर तिब्बती प्रभाव का परिणाम प्रमाणित करते हैं। उनकी मान्यता है कि अनेक भुजाओं तथा पैरों वाले देवताओं का विकास तिब्बत में हुआ था। चीनी तुर्किस्तान का तिब्बत से राजनैतिक संबंध से सांस्कृतिक संबंधों का विकास हुआ हो तथा गणेश के इस स्वरूप का निर्धारण वहाँ नियुक्त हुआ हो। इसे भी किन्तु निश्चित प्रमाण के रूप में नहीं स्वीकारा जा सकता है।[6]

चीनी तुर्किस्तान में किंचित गणेश प्रतिमाओं का मुख एवं शरीर पीत वर्ण का है। सिर प्रभाचक से अलंकृत है। इसमें सिर कुछ दाहिने मुड़ा हुआ है। ऐन्देरे के गणेश का हस्तिकर तुरंत बाएँ मुड़ा है। तदुपरांत सीधा लटकता हुआ बाहर की ओर निकल गया है। निचले दाहिने हाथ में मोदक पात्र है। किन्तु हस्तिकर उसमें से मोदक निकालता दृष्टिगत नहीं होता। ऊपर के दाहिने हाथ में भाले की भाँति वेदिका है। ऊपर के बायें हाथ में संभवतः परशु तथा निचले बाये हाथ में मूलक है, वक्ष के समक्ष है। हार, कंकण, बाजूबंद इत्यादि धारण किए हैं।[7]

बाजाव्रिनक के गुफा मंदिरों से अनेक भित्ति चित्र प्राप्त हुए हैं जिनमें गणेश का आसन मुद्रा में षड्हस्त, सूर्य, चंद्र, ध्वज, वक्ष के समीप गोल पदार्थ (मोदक) तथा विभिन्न रत्नों से मंडित है। सिर चक्रावृत्त है।[8]

इन भित्ति चित्रों की यह विशेषता है कि हस्तिमुख का निर्माण सामान्य गणेश मुख जैसा नहीं किया गया है। हस्तिकर नासिका संबंधित आकार ज्ञात होता है। जिसका अंतिम भाग वराहमुख की भांति हैं। इसलिये गणेश मूर्ति में वाराह मूर्ति का भ्रम उत्पन्न होता है। इसे गणेश मूर्ति प्रमाणित करने के लिए गेटी[9] ने जो सारभूत तर्क दिये हैं, वे इस प्रकार हैं, प्रथमतः गुफा नं. 32 में गणेश अपने भाई कार्तिकेय के साथ इसी रूप में स्थित हैं। द्वितीयतः गुफा नं. 7 में शिव, कार्तिकेय तथा महाकाल के साथ गणेश का चित्रण किया गया है। वाजाव्रिनक की इसी गुफा में वराह का भी चित्र है जो षड्भुज देवता से सर्वथा भिन्न है। यदि इसे वाराह स्वीकार किया जाए तो शिव एवं कार्तिकेय के साथ यह संबंध सर्वथा अस्वभाविक प्रतीत होता है।

खोतान से 75 मील दूर खकलिक से दो चित्र[30] प्राप्त हुए हैं जिसमें एक तो विनष्ट प्राय है जिसके तीन हाथों में मोदक पात्र, अंकुश तथा मूलक है। ऊपर के बाये हाथ का लांछन अस्पष्ट है। धोती की भांति एक अंतरीय तथा एक उत्तरीय धारण किए है। द्वितीय मूर्ति आसन मुद्रा में है पृष्ठभाग में प्रभावली है। किरीटधारी आभूषण से युक्त है। हस्तिकर दाहिने मुड़ा है। जो दाहिने परिचारिका को देखता हुआ सा दृष्टिगोचर होता है। यहाँ भी देवता चतुर्भुज है जिनके तीन हाथ मूलक मोदक तथा एक अस्पष्ट पदार्थ से युक्त है तथा हाथ कटि पर अंतरीय सम्हालने की भंगिमा में टिका है।

तिब्बत–

गणेश को तिब्बत में वह सम्मान न प्राप्त हो सका जो नेपाल, चीनी तुर्किस्तान से प्राप्त हुआ। तिब्बत में गणेश को कभी भी महत्वपूर्ण देवता के रूप में स्थान नहीं दिया गया। तिब्बती महायान बौद्ध धर्म के देवता मण्डल में भी इसे स्थान नहीं मिला।

पश्चिमी तिब्बत से हस्तिमुख गणेश की अनेक मूर्तियॉ उपलब्ध हुयी है। वहॉ भी किन्तु इन्हें उपास्य देव नहीं वरन् राक्षसों एवं दुरात्माओं के विरूद्ध रक्षक के रूप में निर्देशित किया गया है यद्यपि गणेश को यहॉ नेपाल जैसी प्रतिष्ठा सुलभ नहीं हुयी फिर भी इन्हें यहॉ ब्राम्हण एवं बौद्ध मंदिरों के प्रवेश द्वार के ऊपर प्रदर्शित किया गया है। इसे मध्ययुगीन भारतीय परंपरा का प्रभाव परिणाम कहा जा सकता है। निरमाण्द के शिव मंदिर के प्रवेश द्वार के ऊपर एक गणेश मूर्ति निर्मित है।[11]

तत्वों के प्रसिद्ध शेलुगप मंदिर है। (जो ध्यानी बुद्ध बेरोचन का है।) के समीप ही एक गणेश की मूर्ति प्राप्त हुयी है। फ्रेंक का अनुमान है कि यह मूर्ति मूलतः मंदिर के प्रवेश द्वार के ऊपर रही होगी। मूर्ति द्विभुजी है। जिसके वामहस्त में मोदक मात्र तथा दक्षिण हस्त खंडित है। हस्तिकर दायें मुड़ा है।[12] इसी प्रकार तिब्बत के अन्य कई मंदिरों के प्रवेश द्वार के ऊपर गणेश मूर्ति का निर्माण हुआ है। तिब्बत में गणेश को घृणित देवता का पद प्राप्त हुआ, जो महाकाल नेपाल में गणेश के साथ द्वारपाल के रूप में प्राप्त होता है। वही तिब्बत में गणेश के ऊपर बनाया गया है। तिब्बती परंपरानुसार गणेश हिन्दू राक्षस विनायक है। विश्वास एवं श्रद्धा के शत्रु के रूप में प्रकट होने के कारण यह धर्म महाकाल द्वारा मर्दित हुआ।[13]

जब गणेश महाकाल के चरणों के नीचे बनाया जाता है, उस समय यह मुकुट विहीन, आभूषणों से अलंकृत तथा द्विभुज होते हैं। दाहिने हाथ में पात्र तथा बांया हाथ तर्जनी मुद्रा में उभरा होता है। तिब्बत में गणेश के पुरूष एवं नारी दो रूपों का उल्लेख मिलता है। महाकाल के एक पैर के नीचे पुरूष तथा दूसरे पैर के नीचे नारी रूप चित्रित होता है।[14]

नेपाल एवं तिब्बत में बुद्ध मूर्तियों के साथ गणेश को दो प्रकार से प्रदर्शित किया गया है। प्रथमतः गणेश वाम भाग में निर्मित किए जाते हैं जिनका शरीर आंशिक रूप से कुछ उठा हुआ तथा बाहुबल से झुका हुआ होता है। इस मुद्रा में गणेश शांतिमय देवता के पद के नीचे बनाए जाते हैं। द्वितीय मुद्रा में शरीर का अर्द्धांश उठा हुआ, अर्ध झुका हुआ निदर्शित होता है और जिसके ऊपर एक भयानक देवता उसे दबोचे हुए हैं, दृष्टिगोचर होता है।[15]

प्रथम मुद्रा में धारिणी के अनुसार पीत अपराजिता के चरणों के नीचे बनाया जाना चाहिये।[16] किंचित साधनों में देवी अपने वामपद द्वारा गणपति के वामपाद को आक्रान्त करने का विवरण मिलता है। अतः इन्हें देवी गणपति समाक्रांता कहा गया है।[17] देवी कभी बाऍ जंघे या कभी सिर पर पद धारण किए दृष्टिगोचर होती हैं। पूर्णतः पैर के नीचे गणेश का दबा किन्तु कभी भी नहीं दिखाया गया है।

द्वितीय मुद्रा में विघ्नांतक द्वारा मर्दित गणेश का उल्लेख प्राप्त होता है। नेपाली परंपरानुसार काठमाण्डू के समीप वागमती नदी के तट पर ओडियान के एक बौद्ध के एक बौद्ध पंडित ने सिद्धि प्राप्त करने के लिये कठिन तप किया, जिसे गणेश ने विभिन्न आपत्तियों द्वारा विघ्नित करने का

प्रयास किया। इन आपत्तियों से मुक्ति हेतु पंडित ने विघ्न निवारक की प्रार्थना की जो विघ्नांतक के भयंकर रूप में प्रकट हुआ तथा गणेश को पराजित किया।[18]

इस रूप में गणेश विघ्नांतक के पैरों के नीचे रत्नजटित मुकुट से विभूषित होते हैं, इनके दाहिने हाथ में पात्र होता है तथा बायॉ हाथ रक्षात्मक मुद्रा में होता है। अन्य दो हाथों के चिन्ह भिन्न–भिन्न हो सकते हैं।[19]

तिब्बत में बौद्ध देवताओं द्वारा गणेश विजय के जो उदाहरण मिलते हैं उनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि बौद्ध धर्म में सद्भावना के साथ गणेश कभी भी प्रतिष्ठित नहीं हुए। बौद्धों ने गणेश को घृणा की दृष्टि से देखा तथा अपने सम्प्रदाय की सर्वोच्चता को प्रमाणित करने के लिए उसे अपने देवताओं के पदतल के नीचे प्रदर्शित किया। संभव है गणेश संप्रदाय की उत्तरोत्तर समृद्धि के कारण बौद्धों में यह सम्प्रदायिक ईर्ष्या उत्पन्न हुयी हो। भट्टाचार्य ने बौद्ध देवी मारीची या त्रैलोक्य विजय के पैरों के नीचे इन्द्र सहित हिन्दू त्रिदेव (ब्रम्हा, विष्णु और शिव) के चित्रण का उल्लेख किया है, जबकि गणेश एकाकी बनाए गए हैं।[20] इससे यह भी प्रतिध्वनित है कि गणेश विघ्नेश होने के कारण बौद्धों के लिए अकेले ही अधिक शक्तिशाली एवं घातक प्रतीत हुए जिन्हें हेय प्रदर्शित करने के लिए बौद्ध देवताओं द्वारा उन्हें पराजित करने की भावना विकसित हुयी। गणेश महाकाल के अतिरिक्त ध्यानी बुद्ध बोधित्सव मैत्रेय जिसे तांत्रिक रूप में कृष्ण मंजुबी कहा गया है, के नीचे भी निदर्शित किये गये हैं।[21] यह तिब्बती बुद्धि का त्रिनेत्र देवता भयानक होता है। इसके चरणों के नीचे गणेश पीठ के बल निर्मित्र किये जाते हैं। सिर दाहिने मुड़ा होता है, हाथ में कोई चिन्ह नहीं होता। यहॉ गणेश को राक्षस नहीं वरन् हिन्दू देवता के रूप में दिखाया जाता है। शिव की भांति ये जटामुकुट से अलंकृत होते हैं। यहॉ यह भी ध्यातव्य है कि दोनों ही देवता अपने–अपने क्षेत्र में बुद्धि के देवता के रूप में पूजित है। समान देवताओं के इस प्रकार के चित्रण से यह अनुमानित कहा जा सकता है कि बौद्ध धर्म ने हिन्दू धर्म को प्रभावित किया था।

जाबा एवं बाली–

मलाया द्वीप में हिन्दू सभ्यता के प्राचीन प्रमाणों का अभाव है। जावा का ज्ञान भारतीयों को ईस्वी सन् के प्रारंभ से ही रहा, क्योंकि रामायण में यवद्वीप का उल्लेख प्राप्त होता है।[22] बौद्ध यात्री फाह्यान भारत से चीन प्रत्यावर्तन के 414 ई0 में यवद्वीप में ठहरा था जिसके अनुसार वहॉ सन्यासी एवं ब्राम्हण निवास करते थे।[23] इससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि 5वीं सदी ई0 तक जावा में ब्राम्हण धर्म का प्रवेश हो चुका था, यद्यपि आठवीं शदी के पूर्व का कोई अभिलेखिक साक्ष्य नहीं प्राप्त होता।

सर्वप्रथम 732 ई0 का एक पाषाण अभिलेख चन्तल से प्राप्त हुआ। जिसमें एक शिवलिंग की स्थापना तथा शिव, ब्रम्हा एवं विष्णु की स्तुतियॉ प्राप्त होती है। गणेश संप्रदाय एवं मंदिर का तो कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता किन्तु शैव मंदिरों से गणेश की अनेक मूर्तियॉ प्राप्त हुयी हैं। पश्चिमी जावा की एक प्रस्तर मूर्ति[24] तथा दूसरी कांस्य मूर्ति[25] जो आजकल ब्रिटिश संगहालय लंदन में है। इनके प्राचीनतम स्वरूप पर प्रकाश डालती है। कोम[26]

के अनुसार भद्दी प्रस्तर मूर्ति मूर्तिकार का अपूर्ण प्रयास है। मूर्ति द्विभुजी है। पैर अदृश्य है, कोई शिरोभूषण नहीं है किन्तु ललाट के ऊपर ऐसी कुटिल रेखाएँ हैं, जिनसे बाली का संकेत प्राप्त होता है। आंखे मानव की भांति है। जो साधारण ढंग से खुदी है। कर्ण दीर्घ हैं जो मानव कर्ण की भांति है तथा सिर से चपके हुए हैं हस्तिकर दीर्घ है तथा सीधे लटका हुआ है जो अंत में बांये की ओर मुड़ा है। हस्त जो वक्ष पर हस्तिकर को स्पर्श करते हुये बने हैं, मानव हस्त नहीं प्रतीत होते। सभी उंगलियॉ बराबर हैं जिनमें कोई चिन्ह भी नहीं है।

ब्रिटिश संगहालय की कांस्य पाषाण मूर्ति से कुछ विकसित अवस्था की ओर इंगित करती है। ललाट पर मुकुट है जिसके पीछे गोल केश जूडा लटक रहा है। हार एवं कंगन से मूर्ति अलंकृत है। कर्ण मानकर्ण की तरह छाटे हैं तथा आंखे गोल एवं घूरती हुयी है। हस्तिकर छोटा है जो अंदर की ओर मुड़ा है। मानव हस्त वक्ष के कुछ नीचे टिके हैं। वाम हस्त में संभवतः मोदक पात्र है। कोयरीज द्वारा संरक्षित मूर्तियों में एक कांस्य मूर्ति[27] इससे भी अधिक विकसित है। जावा में गणेश की ये कांस्य मूर्तियॉ मुख्यतः तीन विशेषताओं से संपन्न है।[28]

1– आसन मूर्तियों के पैर एक दूसरे से पृथक है तथा स्थूलकाय धड़ पृथ्वी को स्पर्श करता हुआ बनाया गया है।

2– पद के तलवे एक दूसरे को स्पर्श कर रहे हैं।

3– हस्तिकर एकदम सीधा है जो अंत में बाएँ मुड़ा है।

उपर्युक्त दो मूर्तियॉ तथा दियंगपठार की प्रस्तर मूर्ति[29] के मध्य अधिक अंतराल जो जावा की प्राचीनतम विशुद्ध गणेश मूर्ति है। गणेश की प्रधानता बढ़ती गयी। पदतल का एक दूसरे से स्पर्श करना महायन बौद्ध मूर्तियों के प्रभाव का परिणाम था। दियंग की मूर्ति चतुर्भुज है जिसके दाहिने हाथों में मोदक पात्र एवं अक्षमाला है। हस्तिकर सीधा है जो मोदक पात्र के पास बायें मुड़ा है। शरीर विशुद्ध मानव तथा सिर, विशुद्ध हस्ति का है। हार बाजूबंद तथा कंगन से मूर्ति अलंकृत है किन्तु कोई शिरोभूषण नहीं है। जो तृतीय नेत्र है।

अम्स्टर्डम से इसी युग की एक मूर्ति प्राप्त हुयी है जो जटा मुकुट से संपन्न है। इसके पीछे प्रभाचक्र है। योनि के आकार की एक पाषाण वेदिका पर मूर्ति बनी है, जो लिंगवत प्रतीत होती है।[30]

जण्डी परिक्षित से ऐसी ही मूर्ति उपलब्ध हुयी है जो त्रिनेत्र है। सिर पर विकसित पद्मपुष्प है। जाकार्ता संग्रहालय में एक मूर्ति सुरक्षित है जो आसन मुद्रा में है तथा पुष्पामरण से विभूषित है। दाहिने हाथों में खण्डित दन्त एवं अक्षमाला है नीचे के बाये हाथों में मोदक पात्र तथा ऊपर के हाथ का लांछन अस्पष्ट है। देस्सा उदजेल से भी मंदिर के ध्वंशावशेषों से एक गणेश मूर्ति प्राप्त हुयी थी जो आजकल लीडन संगहालय में है। यह मूर्ति चतुर्भुज है मूर्ति के हाथों में सामान्य चिन्ह है। सिर पर ऊॅचा जटा मुकुट है। शरीर भारी एवं रमससे हैं। रमस्से प्रकार की सर्वोत्तम मूर्ति[31] जण्डी सिंगसूरि

से प्राप्त हुई है। मूर्ति चतुर्भुज है तथा सामान्य गणेश लक्षणों से युक्त है। विभिन्न आभूषणों तथा सर्पमेखला से मूर्ति अलंकृत है। सिर इतना नीचे झुका है कि करणु मुकुट दोनों स्कंधों के बराबर है। पद्मासन के स्थान पर पीठिका में कपाल माला निर्मित है।

गणेश का कपाल मालाभूषण मात्रा जावा में प्राप्त होता है। जो विश्व के भैरव रूप का प्रभाव प्रतीत होता है।

वर की गणेश मूर्ति इस प्रकार की सर्वोत्तम कृति है। इस मूर्ति की पीठिका पर 1239 ई0 का एक लेख भी अंकित है।[32] मूर्ति आसन मुद्रा में है सिर धड़ को भी झुकता हुआ बनाया गया है। मूर्ति चार हाथों से संपन्न है। जिसमें सामान्य लक्षण है, पदतल स्पर्श करते हुए बनाये गये हैं। करण्ड मुकुट, कंगन, नुपुर तथा कर्णकुण्डल से अलंकृत है। हाथ झुके हुए पैर लटक रहे हैं जो कपालमाला युक्त आसन को आच्छादित कर रहे हैं। मूर्ति का मुख भाग तो जावा की शैली में है किन्तु पृष्ठ भाग इण्डोनेशिया की शैली में है। पीछे महाकाल अभय प्रदान करता हुआ खड़ा है।

गणेश के रक्षक के रूप में महाकाल के विषय में गेटी का यह अनुमान है कि विघ्नों को दूर करने के लिये एण्डोनेशिया देवता तथा गणेश (जो एक ही स्वभाव के हैं) एक साथ चित्रित है।[33]

सिंगसरि के समीप अर्दिमोत्जी से एक त्रिदेश मूर्ति प्राप्त हुई है। बाश एवं स्टीनकालेन्फेल्स के अनुसार मध्य की मूर्ति नेपाली देव गुहोश्वरी की है, दाहिने गणेश नृत्य मुद्रा में है तथा बाएं चक्र है।[34] पृष्ठ भाग के एक लेख में भट्टारी शब्द है जिसका अभिप्राय देवी से है। फिनट तथा गेटी ने इसे शिव की शक्ति दुर्गा या पार्वती माना है।[35] गणेश मूर्ति चतुर्भुज रही होगी किन्तु मात्र दो ही हाथ अवशिष्ट है जिनमें मोदक पात्र तथा खंडित दन्त है। सिर जटामुकुट युक्त है तथा असन कपालांकृत है।

जावा की गणेश की कांस्य मूर्तियॉ विशेष महत्वपूर्ण है। म्यूनिक में म्यूजियम फूर बोल्केर कुण्ड में एक मूर्ति[36] प्राप्त हुई है जो आसन मुद्रा में चतुर्भुज है। सिर हस्तिकर तथा कर्ण का संतुलन अत्यंत ही प्रशस्त है। करण्डमुकुट कपाल से अलंकृत है। आसन में भी कपाल माला की दो पंक्तियॉ हैं। ऊपर के दक्षिण हस्त में नाग है जो यद्योपवीत के रूप में लटक रहा है। ऊपर के बांये हाथ में गोलाकार हार है। अन्य दो हाथ घुटने पर टिके हैं जिनमें मोदक पात्र हैं। गणेश की सर्वोत्तम कांस्य मूर्ति[37] लीडन संग्रहालय में है जो सिंहासन पर आसीन है। पृष्ठभाग में प्रभाचक्र है, ऊपर राजछत्र है तथा सिंहासन दो हस्ति द्वारा समर्थित है। मध्य में मूषक बना है। देवता सिंहासन पर रखे मनसद पर महाराज लीला मुद्रा में बैठा है जिसका दाहिना घुटना मुड़ा है तथा जो एक पट्ट से बाएं कटि से बंधा हुआ है। मूर्ति चतुर्भुज है जिसके ऊपर के हाथों में अक्षमाला तथा त्रिशूल युक्त परशु है। एक बाएं हाथ में मोदक पात्र तथा दाएं हाथ में त्रिपत्र युक्त मूलक अथवा जड़ सहित दन्त है। जूनबोल ने इसे मूलक सहित दन्त तथा गेटी ने पत्रयुक्त मूलक बतलाया है।[38] इस मूर्ति के भूमध्य में ऊर्जा है जो स्पष्टतः बौद्ध मूर्तियों में उपलब्ध होता है। सर्पमेखला तथा सर्प यज्ञोपवीत से मूर्ति अलंकृत है।

बाली में 8वीं एवं 9वीं शताब्दी में शैव धर्म का व्यापक प्रचार था।[39]

जिसके साथ ही गणेशोपासना का प्रचलन प्रारंभ हुआ। बाली में अधिकांशतः गणेश की स्थानक मूर्तियॉ प्राप्त हुयी हैं। यहॉ की मूर्तियॉ पर जावा एवं भारत की अपेक्षा चीन का प्रभाव अधिक ज्ञात होता है।[40] गणेश नाटे कद के स्थूलकाय हैं सिर विशाल है, नेत्र भी बड़े हैं, तृतीय नेत्र को प्रदर्शित किया गया है, नेत्र गोल तथा हस्ति नेत्र की भांति घूरते हुए हैं। मूर्ति कमर तक नग्न है। जिसके नीचे कटि से मेखला लटक रही है। सर्पयज्ञोपवीत नली में भी सर्पवलय तथा कभी–कभी दोहरे सर्प वलय प्राप्त हुए है।[41] आसन मूर्तियॉ अधिकांशतः पदतल स्पर्श करती हुयी, द्विभुज, आभंग हस्तिमुख स्वाभाविक रूप में, सामान्य कर्ण से सम्पन्न है। हस्तिकर सीधे लटक रहा है जो अंत में थोड़ा सा मुड़ा है। स्टूट रहीम ने बाली में प्रचलित इस परंपरा की ओर ध्यान आकृष्ट किया है जिसमें शासकों के मरणेपरांत उन्हें देवी रूप प्रदान कर उनकी स्मारक मूर्तियॉ बनायी जाती थी, जिनके दाहिने गणेश की मूर्ति बनाई जाती थी। इस प्रकार की गणेश मूर्तियॉ पत्रपुष्प युक्त मुकुट धारण किए हुए हैं। ठीक इसी प्रकार राजपुरूषों को भी मुकुट से अलंकृत किया गया है।

जैम्बरन में एक आसन मूर्ति प्राप्त हुई है।[42] जिसके दक्षिण हस्त में मशाल एवं वामहस्त में मोदक पात्र है। हस्तिकर छोटा है जो अंदर की ओर मुड़ा है। मूर्ति सिंहासनासीन है, सिंहासन अग्निज्वाला से आवृत्त है।

बाली से कांस्य मूर्तियॉ अत्यल्य प्राप्त हुई है। लीडन के कर्म संस्थान से[43] आठवीं सदी की एक मूर्ति उपलब्ध हुई है। मूलतः जिसके चार हाथ हैं मात्र एक ही हाथ अवशिष्ट है। जो दाहिने घुटने पर टिका है। संभवतः उसमें खंडित दंत है। मूर्ति स्थूलकाय है, पाल्थी मारे बैठी है। कोई वस्त्राभूषण नही है। हस्तिकार ऊपर मुकुट की ऊॅचाई तक उठा हुआ है।

बोर्निया–

पांचवीं सदी ई0 से ही बोर्नियो में ब्राम्हण धर्म पनप रहा था। काम्बैग के एक गुफा से ब्राम्हण एवं बौद्ध देवताओं की मूर्तियॉ उपलब्ध हुयी हैं। जिनमें एक गणेश जी की पाषाण मूर्ति है।[44] मूर्ति आसन मुद्रा में है जिसके पादतल स्पर्श कर रहे हैं। उसके चार हाथ है। ऊपर के हाथों में अक्षमाला एवं परशु है, एक दाहिना हाथ खंडित है, एक बायां हाथ पैर पर टिका है, जिसमें हस्तिकर के नीचे मोदक पात्र धारण किए हैं। हस्तिकर एकदम सीधा है, कर्ण पंखवत अस्वाभाविक रूप में विस्तीर्ण है। ललाट के ऊपर पतला मुकुट है। जिसके पीछे केश है। इसमें अर्द्ध चंद्र है। जिससे एक त्रिकोण निकलता हुआ बनाया गया है। आंख एवं नासिका से तो हस्तिमुख मानव मुख की भांति प्रतीत होता है। इस मूर्ति का समय 5वीं सदी ई0 के आस–पास ज्ञात होता है। कोतेई से एक संस्कृत अभिलेख प्राप्त होता है। जो 5वीं सदी का है किन्तु शैली के आधार पर मूर्ति 8वीं सदी के पूर्व की नहीं प्रतीत होती।[45]

चीन–

यह निश्चित रूपेण ज्ञात नहीं होता कि कब एवं किस मार्ग से चीन में गणेशोपासना का प्रवेश हुआ। गेटी[46] ने इस संबंध में दो संभावनाऍ व्यक्त की हैं।

प्रथमतः वह यह प्रतिपादित करते हैं कि संभवतः चीन, तुर्किस्तान, तिब्बत तथा नेपाल द्वारा स्थल मार्ग से भारत से चीन में गणेशोपासना प्रचारित हुयी थी। द्वितीयतः यह भी संभव है कि भारतीय पंडितों अथवा चीनी बौद्ध भिक्षुओं द्वारा समुद्र मार्ग से भारत से लौटते समय तांत्रिक परंपरा में गणेश संप्रदाय का प्रचलन हुआ हो। समुद्र मार्ग द्वारा भारत से चीन जाने के बौद्ध यात्रियों के निर्विवाद प्रमाण प्राप्त होते हैं।

चीन एवं जापान में गणेश दो रूपों में प्रचलित हुए– (1) केवल विनायक (2) कुअनसीतिएन (3) कंगितेन–दोहरे रूप में।

प्रथम रूप में गणेश हस्तिमुख द्विभुज तथा पाल्थी मारे बौद्ध परंपरा में तथा द्वितीय रूप में दो मुख युक्त होते हैं। दुर्भाग्य से चीन में दो ही गणेश मूर्तियॉ प्राप्त हुयी हैं।

1– तुन–हुअंग के शैलोत्खनित मंदिर के भित्ति चित्र में।

2– कुंग–सियेन के गुफा मंदिर की पाषाण भित्ति मूर्ति।

जहॉ। से 531 ई0 का एक अभिलेख भी प्राप्त हुआ है। पाल पेलियत के अनुसार भित्तिचित्र का भी समय छठी सदी ई0 के मध्य प्रतीत होता है। जिससे यह मूर्ति कुंग–सियन की समकालीन होनी चाहिये।[47]

ये चित्रण अजन्ता की चित्रकला की समकालीन है किन्तु दोनों की शैली में किंचित् भिन्नता है। इसलिए संभव है कि इनका निर्माण चीनी चित्रकारों द्वारा हुआ ही न कि किसी भारतीय चित्रकार द्वारा[48] प्रथम मूर्ति के साथ सूर्य, चन्द्र, कामदेव तथा नवग्रह इत्यादि मूर्तियॉ भी प्राप्त हुयी है। गणेश महाराज लीला मुद्रा में है जो चीनी तुकिस्तान केएन्देरे की गणेश मूर्ति से अद्भुत साम्य रखते हैं। इसलिए गेटी ने ठीक ही कहा है कि यदि दोनों एक ही कलाकार द्वारा न भी निर्मित हो तो भी एक कला परम्परा में ये मूर्तियॉ अवश्य निर्मित हुई होगी।[49]

जापान–

जापान में नवीं शती के पूर्व विह्ननिवारक गणेश अज्ञात थे, किंतु बौद्ध भिक्षु कोमों देशि ने बौद्ध तंत्रों के साथ गणेश की उपासना प्रारंभ की। कोमो देशि ने बैरोचन सूत्र की पाण्डुलिपि पढ़ी, किन्तु उसके लिए ग्राह्य नहीं हो पायी। चीनी पंडित हुई–कुओं द्वारा इस विषय का उसे पूर्ण ज्ञान प्राप्त हुआ। तकाओं एवं तोजी दो मण्डलों से अवगत हुआ। चीन में वज्रधातु में चार दिशाओं के रक्षक के रूप में चार देवताओं का चित्रण हुआ। पश्चिम में वज्रवासिन, धनुष बाण सहित पूर्व में वज्रचित्र छत्र सहित, दक्षिण में वज्रभक्षण पुष्पहार सहित तथा उत्तर में वज्रमुख खड्ग सहित प्रदर्शित किये गये। गणेश सर्वोच्च देव के रूप में कोई भी रूप धारण करने में समर्थ थे, वज्रधातु में देवताओं की स्थिति निम्न रूप में होती थी।[50] जापान में गणेश का पंचम रूप विकसित हुआ तो वज्रधातु में वज्रमुख के नीचे प्राप्त होता है। गर्भधातु में भी विनायक मूर्ति उत्तर की ओर प्राप्त होती है। दोनों ही मूलक धारण किये है।[51]

मण्डलों के निर्माण का ज्ञान जापानी परंपरानुसार नागार्जुन से नागबोधि तथा नागबोधि से अमोध वज्र को प्राप्त हुआ था। जापानी दंत कथानुसार[52] माररूरत्सु नाम का एक राजा था जो मांस एवं मूलक भक्षण करता था। जंगल

को वन्य पशुओं से विहीन कर दिया तो मानव मांस यहॉ तक कि जनता का भी भक्षण करने लगा, जिससे एक भयंकर क्रान्ति हुई। यह शासक वास्तव में एक दुष्ट राक्षस था जो एक विनायक का रूप धारण कर स्वर्ग में पलायित हो गया। यही राक्षस बाद में पराजित हुआ तथा बौद्ध धर्म के रक्षक के रूप में नियुक्त हुआ। गर्म धातु में विनायकों की स्थिति निम्न रूप में प्राप्त होती है।[53] चार्ल्स इलियट के अनुसार मण्डलों का विनायक जापान में अधिक लोकप्रिय हुआ। जिसके लिये इकोमा में होजनजी नाम के मंदिर का भी निर्माण हुआ।[54] बाद में गणेश को भारतीय परंपरा में खंडित दंतक ` साथ बनाया गया। मुख मानव मुख की भांति हॅसता हुआ दिखाया गया।[55] गणेश सामान्यतः स्थानक मुद्रा में है। जिनके एक हाथ में वज्र होता है अपने कक्कु–जेन–चो रूप में तीन सिर, प्रत्येक सिर में तीन नेत्र से युक्त होते हैं। इनके चार हाथ होते हैं। जिनमें खडक मूलक, गोलधातु (संभवतः मोदक) एवं ढाल होते हैं। ये पर्वतासीन होते हैं जिसे हस्तिराज नाम से संबोधित किया गया है। यद्यपि विनायक रूप जापान में अधिक प्रचलित न हुआ किन्तु कंगि–तेन (दोहरे रूप में) जोकोवो देशि द्वारा जापान में लाया गया, अधिक लोकप्रिय हुआ।[56]

कांगो तेन गणेश का तांत्रिक रूप है जो योग के सिद्धांतों पर आधारित है। यह देवी युगन शिगोन संप्रदाय में विश्वात्मा (विरोचन) तथा प्रिमारडियल इसेन्स (एकादशसिर युक्त अग्लोकितेश्वर के नारी रूप) का तादाम्य है।[57] प्राचीन फंगि तेन मूर्ति में नर–नारी स्वरूप की प्राचीनतम मूर्ति प्राप्त हुई है जिसमें पुरूष मुख तथा नारी मुख अनावृत हुआ है। स्त्री विनायक मुकुट धारिणी है तथा पुरूष विनायक सिर पर चिन्तामणि धारण किये हैं। उस रूप में कभी दोनों के आसन सामने एवं कभी पार्श्व में होते हैं।[58] विनायक रूप में गणेश को बोधित्सव के साथ परिकल्पित किया गया है।[59]

उपर्युक्त विवेचन से यह आभासित होता है कि गणेश का तांत्रिक रूप बौद्ध तंत्रों के साथ जापान में विकसित हुआ। किन्तु इस तथ्य को विस्मृत नहीं किया जा सकता है कि इस रूप में भी शैव धर्म के प्रभाव से वंचित नहीं है। नर–नारी विनायक रूप आत्मा–परमात्मा पुरूष प्रकृति के प्रतीक हो सकते हैं। जो शिव के अर्धनारीश्वर रूप से प्रभावित प्रतीत होते हैं। भिन्नता यह है कि शिव का एक ही शरीर में वाम भाग स्त्री तथा दक्षिण भाग पुरूष का होता है। किन्तु जापान में दो शरीर प्रदर्शित है। यह भिन्नता दूरी एवं कला की अपरिपक्वता के कारण भी हो सकती है।

इस प्रकार विश्व में गणेश संप्रदाय का प्रसार भले ही विभिन्न हिन्दू एवं बौद्ध देवताओं के साथ हुआ हो किन्तु संप्रदाय का मूलभूत गुण शैव परंपरानुमोदित है। शैव एवं गणपत्य दो पृथक संप्रदाय अवश्य है किन्तु आर्य एवं अनार्य गुणों का सामंजस्य दोनों ही देवताओं में समान रूप से वर्तमान है।

संदर्भ सूची

1. सर, आरेल, स्टीन, ऐन्सियनट खोतान पृ. 251, 439।
2. गेटी गणेश पृ. 35।
3. ऐन्सियन्ट खोतान पृ. 442।
4. गेटी, गणेश, पृ. 85–86।
5. वही, पृ. 86।
6. वही, पृ. 86।
7. गेटी, गणेश पृ. 41।
8. वही, चित्र 4 (पृ.42)।
9. वही, पृ. 42।
10. धवलिकर, विवेकानन्द कमेमोरेशन वाल्यूम, पृ. 6।
11. फॅक, एण्टिववेरी आव इण्डियन तिब्बत, जिल्द 1, पृष्ठ 6 कलकत्ता 1994।
12. फॅक वही, पृ. 38 फलक 17।
13. गेटी, गणेश पृ. 42।
14. वही फलक, 6 (ब)।
15. गेटी, गणेश पृ. 43।
16. बेडेल धारणी कल्ट, पृ. 193।
17. भट्टाचार्य आई0बी0आई0 पृ. 40 (स)।
18. गेटी, गणेश पृ. 43।
19. गेटी, गणेश पृ. 43।
20. वही पृ. 44।
21. माईथोलॉजिकल बुद्ध गुड बेडेल पृ. 139, चित्र 3।
22. गुडवेडेल माईथोलॉजिकल वही पृ. 66।
23. इलियट, वी एण्ड बी, जिल्द 3 प. 152।
24. वही पृ. 133।
25. गेटी गणेश फलक 29 ब।
26. गेटी, गणेश फलक 29 अ।
27. इन लीडिंग जिल्द 2 पृ. 391–394।
28. गेटी गणेश, फलक 9 अ।
29. गेटी, वही पृ. 66।
30. गेटी वही फलक 30 द।
31. गेटी, वही, पृ. 67।
32. ए0जे0केम्पर्स, ऐन्सियटन इण्डोनेशियन आर्ट एम्स्टर्डम, 1959 पृ. 36, फलक–39।
33. इनलीडिंग, क्रोम जिल्द 1 पृ. 93।
34. गेटी, गणेश पृ. 58–59।
35. गेटी, वही पृ0 59।
36. गेटी, वही पृ0 60।
37. गेटी, वही फलक 34 (अ)।
38. गेटी, वही, फलक 32 (अ)।
39. गेटी, गणेश पृ. 62।
40. इलियट बी. एण्ड बी. जिल्द 3 पृ. 183।
41. गेटी, वही पृ0 64।
42. वही, पृ. 65।
43. गेटी, गणेश, फलक 33 (अ)।
44. फलक 10 (अ)।
45. गेटी, वही, पृ. 63–64।
46. विवेकानंद वही कमोमोरेशन वाल्यूम पृ. 13।
47. गेटी, गणेश, पृ. 67।

48. गेटी, गणेश, पृ. 67।
49. गेटी, गणेश, पृ. 67।
50. गेटी, गणेश पृ. 75।
51. गेटी, वही पृ. 76–77।
52. गेटी, गणेश, पृ. 78।
53. गेटी, वही, पृ. 38।
54. गेटी, वही पृ. 79–80।
55. गेटी, गणेश, 79।
56. गेटी, वही, पृ. 80।
57. गेटी, वही, पृ. 80।
58. गेटी, वही, फलक 37।
59. गेटी गणेश, पृ. 80।